अध्याय 2

परमेश्वर की गवाही देना

जब पौलुस ने कुरिंथुस की कलीसिया में विभाजन का सामना किया, तो उसने उसमें अंतर्निहित कारणों की पहचान करना प्रारंभ किया: विभाजन करने वाले समूहों ने अपने पसंदीदा प्रचारक और उनके शिक्षा देने की भाषा शैली या तरीके के आधार पर अपना समूह बना लिया था। प्रेरितों की गवाही का अवलोकन करने के लिए सड़क के दार्शनिकों पर लगाए जाने वाले लोकप्रिय मानदण्डों का प्रयोग किया गया है। इसका परिणाम कलीसिया में उत्पात था। पौलुस ने संसारिक लोगों द्वारा समझे जाने वाले बुद्धि का सामना, परमेश्वर द्वारा मूल्य निरूपण बुद्धि से किया। परमेश्वर ने क्रूस पर यीशु की मृत्यु के द्वारा अनुग्रह का सामर्थ प्रकट किया है। जो इस संसार में बलशाली और प्रभावशाली बनना चाहते हैं उनके लिए परमेश्वर की बुद्धि, जिसकी अपेक्षा की जा सकती है, बहुत थोड़ा मायने रखती है।

कुरिंथुस के मसीही लोग विभाजन से इसलिए ग्रस्त थे क्योंकि उन्होंने आंशिक सुसमाचार की शिक्षा ग्रहण की थी। उनके शारीरिक अंग उन्हें परमेश्वर की बुद्धि, धार्मिकता, शुद्धिकरण, और क्रूस पर छुटकारे का कार्य समझने में विफल कर रही थी। जो लोग संसार की बुद्धि से आकृष्ट थे उनसे आग्रह करने के साथ प्रेरित ने अपनी शिक्षा की पूर्ति की: किस प्रकार उसने मसीह को उनके मध्य आदर्श के रूप में प्रस्तुत किया था, जांचने के लिए कहा। उसने उन्हें केवल सुसमाचार ही नहीं सुनाया था, बल्कि उसने स्वयं अपने आपको उनके सम्मुख एक खरा व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया था। क्रूस के मूल्यों को गले लगाने के द्वारा पौलुस ने उनके लिए एक उदाहरण छोड़ा। उसकी शिक्षा एक काल्पनिक सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया था; बल्कि यह उनके सम्मुख व्यक्तिगत् जीवन शैली के रूप में प्रमाणित किया गया था। उसकी इच्छा वाद-विवाद जीतने की नहीं थी बल्कि वह भाईयों को यह समझाना चाहता था कि वह उन्हें कैसे देखना चाहता है। प्रेरित को इस बात से कोई हिचकिचाहट नहीं थी कि वह अपने आपको उनके सम्मुख सत्य की प्रतिमा, जो उसने सिखाया था, के रूप में प्रस्तुत करे। उसने अपने पाठकों को उसके जीवन का परीक्षण करने की चुनौती दी।

पौलुस का संदेश (2:1-5)

[1]हे भाइयो, जब मैं परमेश्वर का भेद सुनाता हुआ तुम्हारे पास आया, तो

शब्दों या ज्ञान की उत्तमता के साथ नहीं आया। [2]क्योंकि मैं ने यह ठान लिया था कि तुम्हारे बीच यीशु मसीह वरन् क्रूस पर चढ़ाए हुए मसीह को छोड़ और किसी बात को न जानूँ। [3]मैं निर्बलता और भय के साथ, और बहुत थरथराता हुआ तुम्हारे साथ रहा; [4]और मेरे वचन, और मेरे प्रचार में ज्ञान की लुभानेवाली बातें नहीं, परन्तु आत्मा और सामर्थ्य का प्रमाण था, [5]इसलिये कि तुम्हारा विश्वास मनुष्यों के ज्ञान पर नहीं, परन्तु परमेश्वर की सामर्थ्य पर निर्भर हो।

आयत 1. जब से पौलुस ने कुरिंथ का भ्रमण किया था तब से लेकर अब तक तीन वर्ष बीत चुके थे। जिस प्रकार आज कल के मिशनरियों की गवाही है कि नई कलीसिया में मसीही सिद्धांत में स्थिरता और व्यवहार में संतुलन बनाए रखना बड़ा कठीन है। पौलुस ने भी अपने दिनों में इस प्रकार की परिस्थिति में अधिक अंतर नहीं पाया। उसके अनुपस्थिति में, जो उसने कुरिंथ में प्रचार किया था उस पर मूर्तिपूजकों की संस्कृति घुसपैठ कर हावी हो गई थी। प्रेरित को समझ आ गया था कि संदेश और संदेशवाहक उसके पाठकों के मन में घनिष्टता से गुथें हुए हैं। इसलिए, उसने परमेश्वर की "मूर्खता" और संसार की "बुद्धि" के मध्य विषमता (1:21-25) से अपनी ओर अपनी अरंभिक शिक्षा, जो उसने कुरिंथ में दी थी ओर बटाया।

उसके प्रचार में किसी प्रकार का ढोंग या दिखावा नहीं था। कुरिंथुस के मसीही इसकी गवाही दे सकते थे। बाज़ारों में दर्शनशास्त्रियों द्वारा प्रयोग किए जाने वाले विधियों का उसने प्रयोग नहीं किया। चतुराई भरे शब्द या उसके व्यवहार को चरितार्थ नहीं करते थे। जो कानों को खुजाने वाली व्यंग्य या फिर रहस्यों से रोमांचित होना चाहते हैं, उन्हें दूसरी ओर मुड़ने की सलाह दी जाती है। वह एक ईमानदार व्यक्ति के रूप में आया और उसने ईमानदारी से सुसमाचार सुनाया।

पौलुस का विचार स्पष्ट है, लेकिन दो बातों का विश्लेषण किया जाए तो उसके तर्क करने के भेदों की व्याख्या बेहत्तर हो सकती है। सबसे पहले, ज्ञान की **उत्तमता** (καθ' ὑπεροχὴν, *काथ ह्यूपेरोक्सेन)* को केवल शब्द (λόγου, *लोगू)* में संशोधित किया जाए, या उनको "शब्द" और **ज्ञान** (σοφίας, *सोफियास)* दोनों का संशोधित रूप समझा जाए। शब्दांश "उत्तमता" को संशोधित किया जाए तो यह और भी अधिक रूचिकर होगा। "शब्द" और "ज्ञान" एक दूसरे से परस्पर संबंधित है लेकिन ये शब्द, संचार में अलग-अलग पहलुओं पर बल देते हैं। जबकि "शब्द"एक व्यक्ति द्वारा कहे गए विषय वस्तु या फिर जिस प्रकार वह बोलता है, हो सकता है, और "ज्ञान" इसके प्रकृति के अनुसार शब्द की विषय वस्तु के बारे में बोलता है। कुरिंथ में पौलुस अलंकृत भाषा, चतुर दर्शनशास्त्रियों के भांति अवास्तविक शब्द लिए हुए नहीं आया था अर्थात उनके प्रस्तुति करने की तरीके का उसने नकल नहीं किया था। इस कारण, यह अच्छा होगा कि "उत्तमता"का संबंध केवल "शब्द" से ही किया जाए। प्रेरित ने यह भी कहा कि वह ज्ञान लिए हुए नहीं आया है, कम से कम ऐसा ज्ञान तो नहीं जिस प्रकार यूनानी समाज

समझता है। NIV "उत्तमता" को "शब्द" और "ज्ञान" दोनों से जोड़ता हैः "मैं वाकपटुता या ज्ञान की उत्तमता के कारण नहीं आया" ("I did not come with eloquence or superior wisdom")। फिर भी, इस संदर्भ में, NASB का अनुवाद बेहत्तर हैः "मैं शब्द या ज्ञान की उत्तमता के कारण नहीं आया" ("I did not come with superiority of speech or of wisdom")।

व्याख्या से संबंधित चिंता का दूसरा विषय है इसकी साहित्य संरचना में विभिन्नता। कुछ प्राचीन, मान्यता प्राप्त दस्तावेज़ों में 2:1 के अंत में "परमेश्वर का रहस्य" (μυστήριον τοῦ θεοῦ, *मुस्टेरियोन टू थेयू)* पाया जाता है। अन्य कई और दस्तावेज़ों में यह **परमेश्वर की गवाही** (μαρτύριον τοῦ θεοῦ, *मारटुरियोन टू थेयू*) पाया जाता है। NRSV में इसका अनुवाद "रहस्य" किया गया है - लेकिन अधिकांश अनुवाद में यह "गवाही" पाया जाता है। दोनों शब्द त्वरित संदर्भ में पाया जाता है (1:6 में "गवाही"; 2:7 में "रहस्य")। इन दोनों के मध्य चुनाव करना अत्यंत कठीन है। पौलुस का 2:1 में कुरिंथियों को व्यक्तिगत् रूप से मसीह को प्रस्तुत करना दिखाता है। "गवाही" अधिक उत्तम जान पड़ता है क्योंकि यह वे बातें दिखाती है जिसे प्रेरित ने किया था।

आयत 2. जो कुछ पौलुस ने सिखाया उसमें निरंतरता पाई जाती थी जो उसके संदेश के केंद्र बिंदु से प्रवाहित होती थीः **यीशु मसीह और उसका क्रूसीकरण**। प्रेरित ने जानबूझकर उस प्रकार का संदेश प्रस्तुत किया जिसे वह जानता था कि इस संसार के ज्ञानवान उसे घृणित समझेंगे। उसका उद्देश्य उसके पीछे चलने वाला एक झुंड खड़ा करना नहीं था या फिर उसके व्यक्तित्व की गुणगान करने वालों की कतार लगाना नहीं था।भ्रमणकारी उपदेशकों ने कुरिंथुस आकर संभवतः अपने लोक लुभावन बातों से कुछ अनुयायियों को बना लिया था, पौलुस भी उनकी इस प्रकार की विधियों को अपना सकता था, लेकिन उसने सुसमाचार से समझौता करने से इनकार कर दिया था। उसने परमेश्वर द्वारा दिए गए प्रकाशन के अनुसार ही बोलने में भलाई समझी। न तो स्व-मण्डन और न ही धन लोलुभ ने उसे बोलने के लिए मजबूर किया। पौलुस ने कुरिंथुस वासियों को उसके बारे में गवाही देने के लिए कहा। उसने मसीह के दिए संदेश, जो उनके शुद्धिकरण का कारण हुआ, की ईमानदारी से घोषणा करने में किसी तरह का समझौता नहीं किया।

प्रेरित के शब्दों का उप-शीर्षक यह था कि वह चाहता था कि कुरिंथवासी उसके पद चिह्नों का अनुकरण करें। व्यक्तिगत् महिमा प्राप्ति के लिए जिन उद्देश्यों का वे पीछा कर रहे थे, उन्हें त्यागना था। उन्हें भी, उसके समान, ऐसे ईमानदार बनने थे जो बिना किसी कारण के सत्य को सत्य की भांति ही बोले। उन्हें यह समझना था कि मसीह को अपनाने का तात्पर्य संसार द्वारा दिए जाने वाले शक्ति और ज्ञान को त्यागना था। यह कि मसीह उनके लिए क्रूस पर चढ़ाया गया था, वही उनके महिमा का कारण है। उनके लिए संसारिक ज्ञान जो उनको शर्मिंदा करता है, स्वीकार करना मानो ऐसा है जैसे परमेश्वर के ज्ञान को पीठ दिखाना है। जब कलीसिया मसीह के क्रूस के इर्द-गिर्द एकत्रित होती है, तो

मूर्खरतापूर्ण विभाजन करने की शक्ति उन्हें परेशान नहीं करती।

आयत 3. पौलुस ने ज्ञान और मूर्खता से संबंधित जितनी बातें कहीं वह कलीसिया में व्याप्त विभाजन का प्रत्युत्तर था। प्रेरित ज्ञान के बारे में कोई काल्पनिक सिद्धांत प्रस्तुत नहीं कर रहा था। बिना किसी हिचकिचाहट के, पौलुस ने पेशेवर दर्शनशास्त्रियों और वाकपटुताओं के लुभाने वाले बातों, जिनको कुरिंथुस वासियों ने अनुभव किया था, से अलग किया। उनके विपरीत, वह यह दिखाना चाहता था कि वह भी डरा हुआ और निर्बल था। कुरिंथुस वासियों को स्मरण आया कि वह **निर्बलता और भय के साथ, और बहुत थरथराता हुआ** उनके साथ रहा। गलातिया के मसीहियों को उसने लिखा, "... तुम जानते हो कि पहले-पहल मैं ने शरीर की निर्बलता के कारण तुम्हें सुसमाचार सुनाया। और तुम ने मेरी शारीरिक दशा को जो तुम्हारी परीक्षा का कारण थी, तुच्छ न जाना ..." (गला. 4:13, 14)। यह व्यक्ति, जिसने उन्हें सुसमाचार सुनाया उसकी शारीरिक अवस्था के कारण नायक कोई नहीं हो सकता था, न ही चापलूसी करने वाला वक्ता, न ही सुप्रसिद्ध शिक्षक, और न ही बड़ा उद्यमी था। "यह क्रूस की प्रकृति में निहित है कि [सुसमाचार] का प्रचार सुरूचिपूर्ण और प्रभावशाली ढंग से नहीं किया जा सकता है, बल्कि निर्बलता में।"[1]

अपने शब्दों को बलपूर्वक कहने के लिए प्रेरित ने पाठकों को कुरिंथुस की अपनी प्रथम यात्रा के बारे में स्मरण दिलाया (इस घटना का वर्णन प्रेरितों के काम 18 अध्याय में पाया जाता है)। एथेंस में फलरहित परिश्रम करने के पश्चात् वह कुरिंथुस आया था। उसके साथी, तीमुथियुस और सीलास, मकिदुनिया में कलीसिया की उन्नति के लिए कार्य कर रहे थे। पौलुस अकेले ही कुरिंथुस आया था। उसने आरंभिक दिनों के मसीहियों को स्मरण दिलाया कि वे उस व्यक्ति की गवाही दें जिसने ज्ञानवानों एंव वाकपटुकाओं के कोई भी गुण अपने साथ नहीं लाया था। जहाँ तक पौलुस की बात है, कि वह मसीह में पाया जाए और उसका प्रचार करने के द्वारा गौरव और सामर्थ, जैसा संसार समझती है, का परित्याग करे।

आयत 4. जब प्रेरित ने कुरिंथुस के लोगों को अपना **संदेश** और **प्रचार** का स्मरण दिलाया तो वह इन दोनों के मध्य तीव्र विभेद करना चाहता था। पौलुस ने भी, दूसरे लेखकों एंव वक्ताओं के समान, "शब्द-बाहुल्य" ("प्लेओनाज्म"), जान बूझकर शब्दों की पुनरावृति, नामक साहित्यिक पद्धति के द्वारा अपने शब्दों पर ज़ोर दिया। जब "संदेश" और "प्रचार" दोनों शब्द साथ पढ़ा जाता है, तो पौलुस जो कहना चाहता था, की अभिव्यक्ति की परिपूर्णता होती है। **उसकी शिक्षा में ज्ञान की लुभाने वाली बातें नहीं थी**, न ही वाकपटुता वाली शब्दों की झड़ी थी, जिसका कुरिंथुस वासी, यहाँ से गुजरने वाले दर्शनशास्त्रियों से सुनने के आदी थे। इसके बजाय, पौलुस ने कहा, **उसका प्रचार आत्मा और सामर्थ का प्रमाण था**।

जिस "प्रमाण" के बारे में उसने उल्लेख किया है वह निस्संदेह, वे आश्चर्यकर्म हैं जिसे उसके पाठकों ने उसे करते हुए देखा था। प्रेरितों के काम 18 अध्याय में कुरिंथुस में पौलुस द्वारा किए गए आश्चर्यकर्मों का वर्णन नहीं पाया जाता है,

लेकिन कालान्तर में उसने कुरिंथुस नगर की कलीसिया को लिखा, "प्रेरित के लक्षण भी तुम्हारे बीच सब प्रकार के धीरज सहित चिन्हों, और अद्‌भुत कामों, और सामर्थ के कामों से दिखाए गए" (2 कुरिं. 12:12; देखें गला. 3:5)। आत्मा की गवाही, लुभाने वाले सूत्र नहीं, ने सत्य का निर्धारण किया था जिसे पौलुस कुरिंथुस वासियों को सीखा रहा था।

प्रेरित ने जिस संदेश का प्रचार किया था वह उससे अलग नहीं था। वह स्वयं, उसका चरित्र, उसकी ख्याति, परमेश्वर के साथ उसका संबंध और मसीह में उसकी आशा, उन सभी संदेशों का हिस्सा था जिसे उसने कुरिंथुस में प्रचार किया था। पौलुस ने केवल मसीह की देह की एकता के संबंध में अपना बचाव किया। उसकी चिंता विभाजन पैदा करने वाली आत्मा के संबंध में था, जिसने कुरिंथुस की कलीसिया में बंटवारा किया था। विभाजन के कारणों के बारे में पर्यवेक्षण के बाद उसने अपने पाठकों से निवेदन किया है कि वे क्रूस का ज्ञान और मूर्खता पर विचार करें। "सच्ची ज्ञान" का सैद्धान्तिक विचार धारा प्रस्तुत करने में प्रेरित ने शब्द बर्बाद नहीं किया। कलीसिया की शान्ति, परमेश्वर के लोगों की एकता ने उसे पत्री लिखने के लिए प्रेरित किया। सच्चा ज्ञान, विश्वासियों की एकता और शुभकामनाओं से संबंधित था।

आयत 5. प्रेरित ने प्रचार और उदाहरण से अपना विचार हटाकर अब मसीहियों के विश्वास की ओर अपना ध्यान केंद्रित किया। जैसा उसने उन्हें सिखाया था वैसा ही उसने व्यवहार भी किया, **इसलिए कि** [उनके] **विश्वास** का परिणाम उनके उद्धार का कारण ठहरे। जैसे कि प्रेरित का **विश्वास मनुष्यों के ज्ञान पर नहीं, परन्तु परमेश्वर की सामर्थ्य पर निर्भर था**, वैसे ही कुरिंथुस के विश्वासियों का भी था। पौलुस के ज्ञान का स्रोत पवित्र आत्मा था (2:10), और आत्मा ही कुरिंथुस के विश्वासियों को अपने तरीके से ज्ञान प्रदान करेगा। वे एक साथ मिलकर क्रूस की छुटकारा के सहभागी होंगे। पौलुस ने मनुष्य के ज्ञानवान होने की बहाने का इनकार किया, और उसने उनके लिए भी यही चाहा। यदि वे ऐसा करेंगे तो विभाजन और दलबंदी समाप्त हो जाएगी।

उसी समय, प्रेरित स्वयं के बोझ से अवगत् था। कुरिंथुस की कलीसिया के लिए, सत्य और सुसमाचार का सामर्थ कुछ सीमा तक संदेशवाहक के चरित्र पर निर्भर था। आवश्यकतानुसार, सुसमाचार प्रचारक, का मापदण्ड, अक्सर जो वह प्रचार करता है, उसके प्रति समर्पण से की जाती है। चाहे मामला आधुनिक युग का हो या फिर प्राचीन, जो मसीह का सुसमाचार प्रचार करते हैं उन पर एक बड़ी ज़िम्मेदारी होती है।

परमेश्वर का ज्ञान, गुप्त और प्रकट (2:6-13)

कुरिंथुस की कलीसिया में दलबंदी इसलिए हुई थी क्योंकि उन्होंने ज्ञान का गलत व्याख्यान किया था। अंततोगत्वा, पौलुस ज्ञान नहीं त्यागना चाहता था। "परमेश्वर के ज्ञान" (1:21) सुसमाचार की रक्षा करता है। "क्रूसित मसीह"

"परमेश्वर का ज्ञान" था (1:23, 24)। कुरिंथुस के लोगों का पापों से छुटकारा "परमेश्वर के ज्ञान" की गवाही थी (1:30), परंतु "इस युग के हाकिमों" (2:6) ने परमेश्वर के ज्ञान का मनगढ़ंत अनुकरण किया। पौलुस ने इस प्रकार बहाने करने से इनकार किया। प्रेरित ने परमेश्वर के ज्ञान का विकल्प चाहा जब वह उनके बीच "यीशु मसीह वरन् क्रूस पर चढ़ाए हुए मसीह को छोड़" (2:2) और कोई बात नहीं जानना चाहता था। मसीहियों के बीच एकता के उपदेश के बीच, पौलुस ने थोड़ा विराम लेकर उनसे उस ज्ञान के बारे में व्याख्यान करना चाहा जिसे उसने गले लगाया था - और वह चाहता था कि वे भी उस ज्ञान को अपनाएं - वह ज्ञान जो उनके मध्य चल रहे विभाजन की समस्या को दूर कर दे।

ज्ञान के विषय तीव्र विरोधाभास (2:6-9)

6फिर भी सिद्ध लोगों में हम ज्ञान सुनाते हैं, परन्तु इस संसार का और इस संसार के नाश होनेवाले हाकिमों का ज्ञान नहीं; 7परन्तु हम परमेश्वर का वह गुप्त ज्ञान, भेद की रीति पर बताते हैं, जिसे परमेश्वर ने सनातन से हमारी महिमा के लिये ठहराया। 8जिसे इस संसार के हाकिमों में से किसी ने नहीं जाना, क्योंकि यदि वे जानते तो तेजोमय प्रभु को क्रूस पर न चढ़ाते। 9परन्तु जैसा लिखा है, "जो बातें आँख ने नहीं देखीं और कान ने नहीं सुनीं, और जो बातें मनुष्य के चित में नहीं चढ़ीं, वे ही हैं जो परमेश्वर ने अपने प्रेम रखनेवालों के लिये तैयार की हैं।"

आयत 6. कुरिंथुस में कुछ लोगों ने जिस प्रकार के ज्ञान की परिकल्पना की थी, प्रेरित ने उस ज्ञान को परमेश्वर के ज्ञान से अलग किया। जबकि पौलुस उस प्रकार के ज्ञान की शिक्षा नहीं देता था, जिस ज्ञान को **इस संसार के हाकिमों** ने मान्यता दी थी, यह ज्ञान तो उच्चकोटी का ज्ञान था। **जो सिद्ध लोग थे** उन्होंने पहले ही सुसमाचार में निहित इस ज्ञान को पहचान लिया था। प्रेरित यहाँ इसलिए लिख रहा है ताकि उसके कुरिंथुस के पाठक सिद्ध हो जाएं। ज्ञान और सिद्धता उनके बीच हो रहे झगड़े को पीछे धकेल देगी। कमज़ोर व्यवहार बालक करते हैं (3:1) बड़े सिद्ध लोग झगड़े में इसलिए फंस गए थे क्योंकि जहाँ एक व्यक्ति अपने आपको पौलुस का बताता था और दूसरा अपुल्लोस का।

पौलुस ने कुरिंथुस के मसीहियों के सम्मुख दो प्रकार की ज्ञान की बात रखी। पहला परमेश्वर से ज्ञान; और दूसरा जो **इस संसार** के लोगों ने और "इस संसार के हाकिमों" ने अपनाया था। टीकाकार, पौलुस के इस कथन से कि "इस संसार के हाकिमों" से उलझे हुए हैं। कुछ टीकाकारों का मानना है कि ये अंधकार की वे शक्तियां हैं जो मनुष्य के आंखों से छिपी हुई हैं। कुलुस्सियों 1:16 में प्रेरित ने दावा किया कि "देखी या अनदेखी" दोनों परमेश्वर ने सृजा है। इनमें "सिंहासन," "प्रधानताएं," "हाकिम," और "अधिकार" शामिल है (देखें रोम. 8:38; कुलु. 2:15; ESV)। पौलुस, कुरिंथुस वासियों से यह कह रहा था कि जिस ज्ञान ने उनके बीच विभाजन लाया वह "इस संसार के ईश्वर" से प्रेरित था (2 कुरिं. 4:4)। इस व्याख्या की यह समस्या थी कि इस विषय पर परिचय की

आवश्यकता है जो संदर्भ से बिल्कुल अजीब है। आयत 8 में दोबारा "इस संसार के ईश्वर" का उल्लेख पाया जाता है जिन्होंने प्रभु को क्रूस पर चढ़ा दिया था। रिचार्ड ई. आस्टर, जूनियर अपने अवलोकन में ठीक थे जब उन्होंने कहा, पौलुस परमेश्वर के ज्ञान का "राज्य के अधिकारियों की अंधी और अक्षम्य अज्ञानता, इस संसार के ईश्वर"[2] से विभेद कर रहा था।

अपनी सभी पत्रियों के भांति, पौलुस ने आशा की सांस ली। **अंत आ रहा है।** प्रभु लौटेगा। "इस संसार के ईश्वर" जिनके पास अभी शक्ति है लेकिन वे नाश होने वाले हैं। उसने अपने पाठकों को यह नहीं बताया कि प्रभु के आगमन् पर आज के अधिकारी और हाकिम मिट जाएंगे। यह सत्य था, परंतु पौलुस कुरिंथुस वासियों को वर्तमान में उससे भी बढ़कर कुछ और बातों के लिए आश्वासन देना चाहता था। प्रभु का आगमन् जल्दी भी हो सकता है या फिर देरी; लेकिन किसी भी अवस्था में, यह संसार मिट जाएगा। इस बात की प्रक्रिया पौलुस के दिनों से ही प्रारंभ हो चुकी है। अंत अभी नहीं आया है, लेकिन जो लोग इस बात को देख सकते हैं उनके लिए इस संसार के हाकिमों की हार प्रारंभ हो चुकी है। पौलुस ने विनती किया कि "अपने चारों ओर देखो, ज्ञानवान देखेंगे कि यह संसार समाप्ति की ओर जा रहा है।" यूहन्ना ने "नाश होने" के लिए दूसरा यूनानी शब्द का प्रयोग किया है, लेकिन उसका विचार इस विचार से मिलता जुलता है। उसने कहा "अंधकार मिटता जाता है, और सत्य की ज्योति अब चमकने लगी है" (1 यूहन्ना 2:8)। तब उसने "संसार और उसकी अभिलाषाएँ दोनों मिटते जाते हैं," दोहराया (1 यूहन्ना 2:17)।

आयत 7. जिस ज्ञान का पौलुस ने प्रचार किया वह किसी प्रकार का गुप्त ज्ञान नहीं था। बल्कि, परमेश्वर ने उस पर एक **रहस्य** प्रकट किया था जो पहले **गुप्त** था। क्रूस के माध्यम से एक पेचीदा मामले का समाधान हो गया था। "गुप्त ज्ञान"यह था कि एक सर्व-उपस्थित परमेश्वर ने यीशु के द्वारा सब लोगों के लिए जीवन का द्वार खोल दिया है (1:30)। यहाँ तक कि परमेश्वर के चुने हुए लोग जिनको उसने मिस्र की गुलामी से छुड़ाया था, ने भी गलत समझा। रहस्य, या क्रूस का गुप्त **ज्ञान**, अतीत में भी लोगों ने नहीं पहचाना; लेकिन अब, सुसमाचार प्रचार के द्वारा, यह संसार के सम्मुख खुला हुआ है। रोमियों 16:25 में यह विचार धारा स्पष्ट हैः "... उस भेद के प्रकाश के अनुसार जो सनातन से छिपा रहा।" पौलुस ने अन्य स्थानों में भी इस रहस्य की चर्चा की है। मसीह के द्वारा परमेश्वर का प्रकाशन यह है कि मसीह केवल यहूदियों का ही छुड़ाने वाला नहीं है; बल्कि अन्य जाति भी परमेश्वर के राज्य के सहभागी हैं (इफि. 3:4-6)।

प्रेरित ने जानबूझकर "रहस्य" (*मूस्टेरियोन*) शब्द का प्रयोग किया है, जो एक ऐसा शब्द है जो समकालीन यूनानी भाषा बोलने वालों के लिए विशेष महत्व रखता है। यूनानी धर्म का एक प्राचीन लक्षण यह था कि जिन लोगों को किसी विशेष देवी-देवताओं के लिए अलग किया जाता था उनके लिए एक गुप्त संस्कार किया जाता था। यूनानी लोग इस संस्कार को "रहस्य" कहते थे। देमेतर, फसलों की देवी की आराधना इस संदर्भ में जाने जाते हैं, इसके साथ ही शराब

का देवता डायोनिसस भी इसी श्रेणी में आता है। पूरब से भी, अन्य रहस्यमयी परंपरा ने यूनानी बोलने वाले लोगों के बीच जगह बना ली थी, उदाहरण के लिए आसिया से साइबेले और मिस्र से आइसिस। पौलुस ने "रहस्य"शब्द का पुनर्निर्धारण किया।

पौलुस ने सावधानीपूर्वक कहा कि संसार में मसीह के बारे में संदेश अचानक नहीं आया है। यहूदी और गैर यहूदियों के लिए दुःख उठाने वाले मसीह के द्वारा उद्धार देने की परमेश्वर की योजना समयों एंव कालों के पीछे तक जाता है। कि मसीह को दुःख उठाना है उसके बारे में परमेश्वर ने पुनर्विचार नहीं किया (देखें लूका 24:26; प्रेरितों. 17:3)। उसने यीशु के कार्य के बारे में व्यवस्था और भविष्यवक्ता में कहा है (लूका 24:44)। इस तरह, उसकी योजना **पूर्वनिर्धारित** था। बाइबल में पूर्वनिर्धारण परमेश्वर द्वारा दिशा निर्देशित घटनाएं हैं जिसका परिणाम मानव जाति का छुटकारा हुआ। परमेश्वर ने किसी को उद्धार देने के लिए तो किसी दोषी ठहराने के लिए उनके प्रथम सांस लेते ही पूर्वनिर्धारित नहीं किया। हरेक व्यक्ति विशेष का उद्धार सुसमाचार सुनने पर आधारित था। उसके पश्चात्, जिन्होंने सुसमाचार सुना उनको निर्णय लेने के लिए आह्वान दिया जाता है (रोम. 10:14)। मसीह से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व एक बुद्धिमान यहूदी ने ठीक ही कहा थाः

जब परमेश्वर ने, आदि में, मनुष्य को बनाया,
उसने उसे उसके स्वतंत्र इच्छा के हवाले किया।
यदि तुम चाहो तो यह आज्ञा अपने लिए रख सकते हो;
उसकी इच्छा पूरा करना विश्वासयोग्यता है।
तुम्हारे सम्मुख अग्नि और जल रखा है;
जिसको भी तुम चुनते हो, अपना हाथ फैलाओ।
मनुष्य के सम्मुख जीवन और मृत्यु है,
जो भी वह चुनता है वह उसे दिया जाएगा।[3]

आयत 8. क्रूस के विषय में जिस बुद्धि के साथ पौलुस प्रचार करता था वह बुद्धि उसी के समान अन्य दार्शनिकों से भिन्न प्रकार की थी। कुछ लोगों ने बाज़ारों में घूमकर प्रचार करने वाले प्रचारकों से घृणा की तो कुछ लोगों ने उनकी प्रशंसा की और साथ ही **इस संसार के हाकिमों** के साथ मिलकर परमेश्वर की बुद्धि के प्रति उन्होंने अपनी अज्ञानता उस समय प्रकट की जब उन्होंने **तेजोमय प्रभु को क्रूस पर चढ़ाया**। क्रूस के बैनर तले कुरिन्थ के मसीही लोगों के लिए आवश्यक था कि उन्हें यह समझाया जाए कि वे एक होकर रहें। पौलुस के पाठक विश्व के महान लोग थे और उसने उन्हें पूरे बल के साथ समझाना चाहा फिर भी वे लोग परमेश्वर की बुद्धि को समझ नहीं पाए। परमेश्वर के प्रति उनकी अज्ञानता के परिणामस्वरुप एक व्यंगय उत्पन्न हुआ: वे लोग जो यीशु से घृणा करते थे और उससे डरते थे उन्होंने यीशु को क्रूस पर चढ़ाने के द्वारा परमेश्वर की इच्छा को पूरा किया। यह "हमारी महिमा के लिये" था (2:7) कि "तेजोमय प्रभु"

ने क्रूस का गुप्त **ज्ञान** भेद की रीति से हम पर प्रकट किया।

यह एकमात्र उदाहरण है जहाँ पर पौलुस ने यीशु का विशेष स्थान बताने के लिए "तेजोमय प्रभु" पद का प्रयोग किया। उसके द्वारा बताया गया अर्थ एक स्पष्टता से तो कम ही है। सम्बन्धात्मक विभक्ति (τῆς δόξης, *टेस डोक्सेस)* विशेषणात्मक हो सकती है, और वह है, "तेजोमय प्रभु।" NASB इसी प्रकार के एक पद याकूब 2:1 का अनुवाद "हमारे महिमामय प्रभु यीशु मसीह" के रुप में करती है। सम्भव है कि पौलुस बारी-बारी से परमेश्वर के उच्च और पवित्र मार्गों का संक्षेप "महिमा" शब्द के साथ दे रहा हो। उन सबका सर्वोच्च प्रकटीकरण यीशु है। तीसरी सम्भावना यह है कि पौलुस के मस्तिष्क में वह महिमा हो जो कि परमेश्वर ने यीशु को दी जब उसने उसे स्वर्गीय स्थानों में अपने दाहिनी ओर बैठाया।

आयत 9. यहाँ दिए गए उद्धरण का स्त्रोत अनिश्चित है; सम्भव है कि यह यशायाह 64:4 का एक मुक्त रुपान्तरण हो (64:3; LXX), हालांकि यशायाह और पौलुस के द्वारा दिए गए बिन्दू अधिकता के साथ भिन्न हैं। सामान्यतया पौलुस **एसा लिखा है** कहते हुए पुराना नियम से अवतरण लेता है (जैसा कि रोमियो 15:3, 9 में देखा जा सकता है), परन्तु सम्भव है कि यहाँ वह बाइबल के बाहर से एक स्त्रोत से, एक कथन की ओर संकेत कर रहा हो। ऐसा उसका स्वभाव नहीं है इस कारण यह कथन सामान्य नहीं लगता। अन्य सम्भावना यह है कि वह यीशु के एक कथन का उद्धरण कर रहा था जिसका रिकॉर्ड सुसमाचारों में देखने को नहीं मिलता। पौलुस ने प्रेरितों के काम 20:35 से एक अन्य प्रकार के अज्ञात कथन की ओर संकेत दिया। जैसा कि वह एक लिखित कथन का उद्धरण कर रहा था इसलिए यह सम्भव है कि वह पुराना नियम से एक विचार को विस्तार से बता रहा था।

यशायाह ने लिखा, "क्योंकि प्राचीनकाल ही से तुझे छोड़ कोई और ऐसा परमेश्वर न तो कभी देखा गया और न कान से उसकी चर्चा सुनी गई जो अपनी बाट जोहनेवालों के लिये काम करे" (यशा. 64:4)। यहाँ उत्तम व्याख्या यह है कि इस आयत के विषय में पौलुस का अस्पष्ट अवतरण उसके स्वयं के प्रेरक, मसीह के आधिकारिक प्रेरित होने के कारण ही प्राप्त किया गया। इस प्रकार यशायाह के कथनों में उसने विस्तार से बताया जिससे कि जो कुछ भविष्यद्वक्ता कह रहा था उससे एक नया बिन्दु प्राप्त किया जा सके। पवित्र-आत्मा के द्वारा परमेश्वर ने जो प्रकाशन उसे दिया उस पर निर्भर रहते हुए (1 कुरिं. 2:10), उसने अपने शीर्षक का महत्व बताने के लिए यशायाह 64:4 और 65:16 के शब्दों के भाग चुन लिए और उन विचारों का पुनःविस्तार उस प्रकार कर दिया जैसा कि उसे उचित लगा। प्रेरित ने इस प्रकार का कोई दावा नहीं किया कि यशायाह की शिक्षा में दी गई शिक्षा के बिन्दू ठीक वही हैं जो कि वह कुरिन्थ में अपने पाठकों को समझाना चाहता था। इसके स्थान पर, पौलुस ने यशायाह में परमेश्वर की अकथनीय बुद्धि और सामर्थ को पाया - वह बुद्धि और सामर्थ जिसे **न तो किसी आँख ने देखा और न ही किसी कान ने सुना हो** - जिससे कि कुरिन्थ की परिस्थिति के साथ उसे

जोड़ा जा सके।

दो सच्चाइयाँ बताने में यशायाह के शब्दों ने पौलुस की सहायता की। प्रथम, उसने यह प्रमाणित किया कि मसीह के सन्देश में परमेश्वर की बुद्धि प्रकट की गई और मसीह के क्रूस पर चढ़ने के परिणामस्वरुप पूर्व में ही परमेश्वर के लोगों के लिए मानव सोच से परे आशिषें दे दी गई हैं। द्वितीय, अब भी अन्य आशिषें हैं जो कि **परमेश्वर ने अपने प्रेम करने वाले लोगों के लिए तैयार कर रखी हैं** जो कि अभी प्राप्त होना शेष है।

अपने समय के अन्य लोगों के समान ही पौलुस ने मानव वाद-विवाद के केन्द्र के रुप में **हृदय** के विषय में अलंकारिक रुप से बताया। उसने और उसके समकालीन लोगों ने भावनाओं के लिए स्थान के रुप में अंतड़ियों के विषय में सोचा और कुछ मामलों में गुर्दों के विषय में सोचा। उदाहरण के लिए जब पौलुस ने फ़िलेमोन से कहा कि उसने उनेसिमुस को लौटा दिया है तब उसने उसके लिए कहा कि वह "मेरे हृदय का टुकड़ा है" (फ़िलेमोन 12)। अक्षरश, पौलुस ने कहा कि वह कैदी "इसके निकट की अंतड़ी" है। "सम्पूर्ण आन्तरिक जीवन के लिए 'हृदय' का प्रयोग किया गया है जिसमें विचार, इच्छा के साथ-साथ भावनाएँ भी शामिल हैं, जबकि कभी-कभी यह इनमें से किसी एक या अन्य पर झुकाव रखता है।"[4]

परमेश्वर का आत्मा (2:10-13)

10परन्तु परमेश्वर ने उनको अपने आत्मा के द्वारा हम पर प्रगट किया, क्योंकि आत्मा सब बातें, वरन् परमेश्वर की गूढ़ बातें भी जाँचता है। 11मनुष्यों में से कौन किसी मनुष्य की बातें जानता है, केवल मनुष्य की आत्मा जो उसमें है? 12वैसे ही परमेश्वर की बातें भी कोई नहीं जानता, केवल परमेश्वर का आत्मा। परन्तु हम ने संसार की आत्मा नहीं, परन्तु वह आत्मा पाया है जो परमेश्वर की ओर से है कि हम उन बातों को जानें जो परमेश्वर ने हमें दी हैं। 13जिनको हम मनुष्यों के ज्ञान की सिखाई हुई बातों में नहीं, परन्तु आत्मा की सिखाई हुई बातों में, आत्मिक बातें आत्मिक बातों से मिला मिलाकर सुनाते हैं।

आयत 10. प्रेरित ने पद को सटीक बैठाने का तरीका यशायाह से उधार ले लिया जिससे अपने पाठकों को कायल कर सके कि मसीही लोगों द्वारा थामी हुई परिपक्व बुद्धि अतुलनीय रुप से इस युग के हाकिमों की बुद्धि से सर्वोच्च हैं। इसकी सर्वोच्चता **आत्मा के द्वारा ... प्रकट की गई है**। जब पौलुस अपने पाठकों को आत्मा के विषय में विचार करने की ओर खींचता है तब उसने प्रथम पुरुष बहुवचन सर्वनाम **हम** को स्थापित किया। 2:12, 13 में उसने "हम" को चार बार अतिरिक्त रुप से लिखा। पौलुस स्वयं के साथ किसे शामिल कर रहा था? एक सम्भावना यह है कि वह प्रेरिताई अधिकार पर बल देना चाह रहा था। पौलुस और अन्य प्रेरितों के पास परमेश्वर से प्राप्त प्रकाशन था जिन्होंने सांसारिक बुद्धि को भी पीछे छोड़ दिया। इसी के साथ प्रेरिताई अधिकार की पहचाने के विषय में

कलीसिया में समस्याएँ उत्पन्न करने वाले विघटन का निपटारा किया जा सकता था। फिर भी पौलुस ने उसी समय के सन्दर्भ में किसी अन्य प्रेरित की ओर संकेत नहीं किया। एक नम्र तरीके के रुप में "हम" शब्द को अच्छी प्रकार से समझा जा सकता है जिसके द्वारा पौलुस ने अपने पाठकों से पहचान और सम्बन्ध प्राप्त किया। आत्मा से प्राप्त सीधे प्रकाशन के द्वारा **सब चीज़ों की, यहाँ तक कि परमेश्वर की गूढ़ बातों की खोज करने के लिए** भी उसे योग्य बना दिया गया। जब कुरिन्थ में रहने वाले भाई पौलुस के शब्दों को पढ़ते हैं तब वे उसके प्रकाशन में शामिल हो गए।

आयत 11. जब पौलुस ने **मनुष्य की आत्मा** के विषय में लिखा तब उसके लिखने का अर्थ स्पष्ट रुप से मनुष्य के स्वयं के विषय में, उसके मन और व्यक्तिगत विचारों के विषय में था। स्वयं मनुष्य जितना स्वयं की अभिलाषाओं और इच्छाओं के विषय में जानता है उतना कोई अन्य नहीं जान सकता। एक व्यक्ति और उसकी आत्मा समान हैं।

> पौलुस के अनुसार एक व्यक्ति का शरीर उसकी इच्छा, उसके व्यवसाय और उसके स्वयं से उसे अलग नहीं किया जा सकता। जैसा वह व्यक्ति है वैसा ही उसका शरीर है; जिस उद्देश्य के लिए एक व्यक्ति जीता है और मरता है उस उद्देश्य को यह प्रकट करता है अथवा इससे अधिक अन्य व्यक्ति के लिए प्रकट करता है जिससे लिए वह मरता है और जीता है (रोमियो 14:7-9)।[5]

एक व्यक्ति में उसका शरीर और आत्मा का एक साथ होना मसीही लोगों की सहायता करता है जिससे कि वे यह समझ सकें कि किस प्रकार परमेश्वर का आत्मा परमेश्वर को उसी प्रकार प्रकट करता है जैसा कि वह है। त्रिएक परमेश्वर का एक विवरणात्मक सिद्धान्त विकसित किए बिना ही प्रेरित ने यह परिणाम निकाला कि पवित्र-आत्मा परमेश्वर के अस्तित्व के गुण में भागीदार होता है। मात्र **परमेश्वर का आत्मा** ही **परमेश्वर के विचार** जानता है। फिर, "परमेश्वर का आत्मा" विश्वासियों में कार्य करता है और उन्हें इस योग्य बनाता है कि वे परमेश्वर को जान सकें और उन आशिषों को जान सकें जो वह उन लोगों को देता है जो कि उसकी बुलाहट का प्रतिउत्तर देते हैं। *एक मसीही व्यक्ति पवित्र-आत्मा के द्वारा परमेश्वर की बुद्धि तक पहुँच रखता है।* संसार की बुद्धि "नाशवान" है (2:6), परन्तु परमेश्वर की बुद्धि उस महिमा को प्रकट करती है "जो परमेश्वर ने अपने प्रेम रखनेवालों के लिये तैयार की हैं" (2:9)।

आयत 12. कुरिन्थ में मसीही लोगों के सम्मुख जिस बुद्धि का प्रस्ताव पौलुस ने रखा **वह परमेश्वर से प्राप्त पवित्र-आत्मा** में सहभागी होने के फलस्वरुप थी। परमेश्वर से प्राप्त होने वाला प्रकाशन, **संसार की आत्मा** द्वारा प्रेरित बुद्धि से पूर्ण रुप से भिन्न क्रम का है। "संसार की आत्मा" आत्म-विवेकी तत्व नहीं है; यह मन के प्रारुप के लिए एक अलगाव की स्थिति है जो कि आत्म-योग्यता पर, सामर्थ को काम में लेने पर और संवेदात्मक सन्तुष्टि पर निर्भर रहती है। आकाश तक पहुँचने के लिए मिनारों का निर्माण करने जैसे लक्ष्यों में लिप्त (उत्पत्ति 11:4)

मानवजाति अपनी चतुराई में डूब गई। स्वयं को बुद्धिमान बताते हुए लोग "संसार की आत्मा" के बन्दी हो गए और इस प्रकार स्वयं को मूर्ख साबित किया (रोम. 1:22)।

"संसार की आत्मा," से परे "परमेश्वर से आने वाला आत्मा" स्वयं में आत्म-सम्मिलित व्यक्तित्व है जो कि मानव समय में सच्चे परमेश्वर को प्रकट करने के लिए आता है। "परमेश्वर से आने वाले आत्मा" ने मानव हृदयों में परमेश्वर का प्रेम उँडेला (रोम. 5:5)। कुरिन्थ में पवित्र-आत्मा विश्वासियों को इस योग्य बनाता है कि वे कपटी, विनाशी, प्रलोभन देने वाली आवाज़ों की पहचान कर सकें **जिससे कि** [**वे**] **उन चीज़ों के विषय में जान सकें ... जो कि उन्हें परमेश्वर के द्वारा मुफ़्त में दी गई हैं**।

पौलुस का उद्देश्य इन मसीही लोगों को सुनिश्चित करना था-सम्भव है कि क्रूस के सन्देश में किसी प्रकार से सांसारिक बुद्धि जैसा छल न हो परन्तु इस कारण से इसे निरस्त नहीं किया जा सकता। "परमेश्वर से आने वाला आत्मा" आज्ञाकारी विश्वासियों को इस योग्य बनाता है कि वे उन सब अच्छे वरदानों को जाने और उन्हें बाँटें जिनका वायदा परमेश्वर ने अपने लोगों से किया, जबकि "संसार की आत्मा" किसी प्रकार का कोई प्रस्ताव नहीं रखती।

आयत 13. प्रेरित ने कुरिन्थ के लोगों को यह जानकारी दी - "उन चीज़ों के विषय में जान सकें ... जो कि उन्हें परमेश्वर के द्वारा मुफ़्त में दी गई हैं" वे पवित्र - आत्मा से हैं। आयत 13 कहती है, **जो बातें हम सिखाते हैं**। पौलुस यह समझ गया कि जिस प्रकाशन के विषय में उसने कहा और लिखा उसे आगे पहुँचाने के लिए पवित्र-आत्मा उसके द्वारा काम कर रहा है (देखें इफ़ि. 3:3, 4)। जो कुछ उसने लिखा उसे कुरिन्थ में परमेश्वर की आज्ञा के रुप में स्वीकार किया जाना चाहिए था (1 कुरिं. 14:37)। कुरिन्थ के लोगों को जो उपदेश उसने दिया वह **मनुष्यों के ज्ञान की सिखाई हुई बातों में नहीं था परन्तु आत्मा की सिखाई हुई बातों में था**। आत्मा में जो शब्द अपना स्त्रोत प्राप्त करते हैं वे कुरिन्थ की कलीसिया में टूटे हुए जोड़ों को चँगा करने का काम करते हैं। वे सब सदस्यों को व्यवस्थित कर देते हैं जिससे कि वे "एक ही मन और एक ही मत होकर मिले रहें" (1:10)।

क्रिया शब्द **मिलाना** (συγκρίνω, *सुनक्रिनो)* का अनुवाद किया गया है तथा इसे नया नियम में, 2:13 में और दो अन्य बार 2 कुरिंथियों 10:12 में देखा जा सकता है। इस शब्द के तीन सम्भावित अर्थ हो सकते हैं: *"मिलाना," "तुलना करना,"* और *"व्याख्या करना।"*[6] 2 कुरिंथियों 10:12 के सन्दर्भ में *"तुलना करना"* अनुवाद की आवश्यकता रखता है परन्तु 2:13 में इसका अर्थ **आत्मिक** शब्द के दो बार उत्पन्न होने के लिंग पर विचारणीय स्तर पर निर्भर है। एक उदाहरण में विशेषण (πνευματικὰ, *न्युमटिका)* स्पष्ट रुप से बिना किसी लिंग का है जिसका अर्थ "आत्मिक बातें" है। अन्य (πνευματικοῖς, *न्युमटिकोइस)* यूनानी में एक काल से सम्बन्धित बहुवचन है। यह समान प्रारुप बिना किसी लिंग का है और पुल्लिंग के लिए प्रयोग में लिया गया है। अगर इसे पुल्लिंग में

समझना है तो यह सम्भावित रुप से "आत्मिक जन" अथवा "आत्मिक शब्दों" की ओर संकेत करेगा। अगर इसे बिना किसी लिंग में पढ़ा जाता है तो यह आत्मिक विचारों की ओर संकेत करता है। "व्याख्या" करने का अर्थ बताने के लिए और यह बताने के लिए कि विशेषण "आत्मिक" पुल्लिंग है। NRSV *sunkrinō* प्रयोग में लेता है जिसके कारण 2:13 इस प्रकार पढ़ा जाता है "... आत्मिक बातें आत्मिक बातों से मिला मिलाकर उन लोगों को सुनाते हैं जो कि आत्मिक हैं।"[7]

NASB और NIV एक ऐसी पहुँच प्राप्त करते हैं जो कि NRSV से भिन्न है: "… आत्मिक विचारों को आत्मिक शब्दों से मिलाना" (NASB) और "… आत्मा के द्वारा सिखाए हुए शब्दों के साथ आत्मिक सच्चाई समझाना" (NIV)। वे यह समझते हुए विचारों में एक-दूसरे के समान हैं कि "आत्मिक" शब्द को पुल्लिंग बताने पर इस पर प्रश्न उत्पन्न होंगे परन्तु "शब्दों" में इसे लागू करने के लिए वे अनुमान लगाते हैं। पौलुस की शिक्षा को हानि पहुँचाए बिना दोनों ही अनुवाद की रक्षा की जा सकती है परन्तु जैसा कि पौलुस इस बात के लिए चिन्तित था कि उसके पाठक पवित्र-आत्मा के द्वारा परमेश्वर के प्रकाशन में भरोसा रखते थे, इस कारण NRSV का अनुवाद, "जो आत्मिक हैं," जो कि लोगों की ओर संकेत करता है वह अधिक ठीक है।

शारीरिक मनुष्य और आत्मिक मनुष्य (2:14-16)

यीशु मसीह का वस्त्र उठाने का अर्थ है एक मिशनरी बनना। स्वयं का विश्वास यीशु पर लाना, हृदय और प्राण से उससे प्रेम करने के लिए विश्वासियों से यह अपेक्षा कि जाती है कि वे जिन लोगों से प्रेम करते हैं उन लोगों को जाकर बताएँ कि उन्होंने क्या पाया है। यह मसीही लोगों का स्वभाव है कि जब वे असामान्यता या उससे भी अधिक कुछ बुरी स्थिति का सामना करते हैं अथवा संसार से शत्रुता का सामना करते हैं तब घबरा जाते हैं। कोई अन्य जन ऐसा क्यों नहीं कर सकता? पौलुस ने इस प्रश्न का उत्तर 2:14-16 में दिया।

[14]परन्तु शारीरिक मनुष्य परमेश्वर के आत्मा की बातें ग्रहण नहीं करता, क्योंकि वे उसकी दृष्टि में मूर्खता की बातें हैं, और न वह उन्हें जान सकता है क्योंकि उनकी जाँच आत्मिक रीति से होती है। [15]आत्मिक जन सब कुछ जाँचता है, परन्तु वह आप किसी से जाँचा नहीं जाता। [16]"क्योंकि प्रभु का मन किसने जाना है कि उसे सिखाए?" परन्तु हम में मसीह का मन है।

आयत 14. शारीरिक मनुष्य शब्द का अनुवाद किसी भाषा का मुहावरा लेकर उसे अन्य भाषा में स्थानान्तरित करने की कठिनाई के विषय में बताता है। अंग्रेज़ी में ψυχικός *(सूखीकोस)* के समान और कोई शब्द नहीं है, जबकि "शारीरिक मनुष्य" कम-से-कम सही सीमा के अन्तर्गत है। पौलुस के मन में वह मनुष्य है जो कि ऊपरी सतर पर जीता है जहाँ पर शारीरिक प्रवृति नियन्त्रण में रहती है। शारीरिक मनुष्य खाता है, सोता है, आनन्द की खोज करता है और

लाभों के लिए लड़ता है, प्रेम, नैतिकता और स्वयं के अस्तित्व की संवेदना के प्रति कम चिन्तित रहता है। विश्व अथवा मानवजाति के स्वभाव के प्रति जो भी विचार वह रखता है वे उसकी स्वयं की कल्पना के स्त्रोतों के द्वारा दृढ़ता के साथ होते हैं। इससे और भी अधिक विकसित रुप में उसकी कल्पना "दर्शनशास्त्र" में परिवर्तित कर दी गई है। सम्भव है कि शारीरिक मनुष्य अज्ञानता में जीए अथवा सम्भव है कि वह एक कूतर्की दार्शनिक हो। इस प्रकार के लोगों के लिए स्वयं परमेश्वर के प्रकाशन यह समझने में अर्थहीन होंगे कि जीवन किसके विषय में है। अतः, वे परमेश्वर के वचन को मूर्खता समझकर नकार देते हैं। इसके विपरीत परमेश्वर स्वयं पर केन्द्रित आनन्द और मूर्खता के रुप में आत्म-केन्द्रित कल्पना, दोनों को ही देखता है (3:19)।

शारीरिक मनुष्य और आत्मिक मनुष्य के बीच कुछ ही बताया गया है। ये दोनों भिन्न धूरी पर घूमते हैं। शुद्ध रुप से शारीरिक मनुष्य **परमेश्वर के आत्मा की बातों को स्वीकार नहीं करता**। यह क्रूस के सन्देश के प्रति उसकी उपेक्षा अथवा शत्रुता की जानकारी देता है। उसके लिए आत्मिक मनुष्य की चिन्ताएँ **मूर्खतापूर्ण होती हैं और वह उन्हें समझ नहीं सकता**। अपनी शारीरिक बुद्धि पर निर्भर होते हुए और जैसा कि वह निर्भर है, शारीरिक मनुष्य परमेश्वर के प्रकाशन का मूल्यांकन करने और उनकी प्रशंसा करने के स्त्रोतों के अभाव में रहता है। "परमेश्वर के आत्मा" के द्वारा प्रकाशित चीज़ों की **प्रशंसा आत्मिक रीति** से की जानी चाहिए।

पौलुस ने कुरिन्थ के विश्वासियों को यह भरोसा दिलाया कि जब वे सिखाए जाने के लिए आत्मा को स्वीकृति देते हैं तब वे ईश्वरीय ज्ञान में सहभागी होते हैं। इस प्रकार की परख अन्दर से ही समझी जा सकती है। एक मसीही व्यक्ति पूर्ण भलाई, आशा और मसीह के साथ संगति एक अविश्वासी के साथ नहीं बाँट सकता। इस प्रकार का ज्ञान मात्र मसीह में जीने के द्वारा आता है। एक व्यक्ति को चाहिए कि परमेश्वर का आत्मा पाने से पहले वह स्वयं को परमेश्वर के सम्मुख खोले।

रॉबर्ट एच स्टेन ने यह इंगित किया कि यह सम्भव है कि एक अविश्वासी व्यक्ति स्वयं के विषय में एक स्पष्ट समझ रखने के बाद भी बाइबल विषयक सच्चाई के व्यक्तिगत महत्त्व को नकार दे।[8] जब अविश्वासी जन "मूर्खता" के रुप में बाइबल विषयक शिक्षा को नकार देता है तब वह इस बात पर बल देता है कि वह मसीही गवाही में विश्वास नहीं करता कि ऐतिहासिक रुप से परमेश्वर, यीशु मसीह के व्यक्ति रुप में सक्रीय है। सम्भव है कि उसे बाइबल विषयक रिकॉर्ड की ऐतिहासिक व्यवस्था की जानकारी हो और पौलुस के दावों के अर्थों के विषय में भी एक दृढ पकड़ रखता हो। जब वह यह सोचता है कि जो कुछ वह सुनता है वह मूर्खता है तब किसी और प्रकार से इसे समझा नहीं जा सकता कि एक बौद्धिक स्तर पर समझ रखने के लिए वह अयोग्य है। इसके स्थान पर वह स्वयं के लिए सुसमाचार के महत्त्व को नकार देता है।

इस पद में पहचाने गए लोगों की तीन श्रेणियाँ उलझा देने वाली हैं। कुछ

उन्हें सुव्यवस्थित श्रेणी में बाँटना चाहते हैं: (1) "आत्मिक" (πνευματικοί, *न्युमटिकोई)* वे पुनर्जन्म पाए हुए लोग हैं जो कि आत्मिक रुप से परिपक्व हैं और इस कारण पौलुस के सहयोगी हैं। (2) "कामुक" (σαρκικοί, *सर्कीकोई)* पुनर्जन्म पाए हुए लोग नहीं हैं (3:3)। (3) "शारीरिक" मनुष्य (ψυχικοί, *सूखीकोई)* अपरिपक्व लोग हैं। यहाँ शब्दावली उस समय रुक जाती है जब एक मनुष्य यह अनुभव करता है कि पौलुस ने समान लोगों को *सर्कीकोई* और *सूखीकोई*, दोनों ही कहा है। 3:3 में पौलुस का विषय अन्यजाति लोग नहीं थे; ये कुरिन्थ के मसीही लोग थे। दो भिन्न दृष्टिकोण से देखने पर बाद के दो समूह को समान प्रकार के लोगों के रुप में बहुत ही अच्छी प्रकार से देखा गया है। दोनों ही कामुक इच्छाओं के विषय में बताते हैं और उच्च जीवन जीने की ओर लेकर जाने वाली परमेश्वर की बुलाहट के प्रति अनिच्छा रखते हैं।

पौलुस के अनुसार सब प्रकार का दिखावटी प्रताप, धन, दार्शनिक बुद्धि और संसार की ताकत परमेश्वर के द्वारा पूर्ण रुप से नकार दिए गए हैं और परमेश्वर के लोगों के द्वारा भी नकार दिए जाने चाहिए। परमेश्वर ने अपना सामर्थ प्रकट करने के लिए जगत के निर्बलों को चुन लिया है (1:27)।

आयत 15. कुछ लोग जिनके बीच अन्तर बताने के लिए पौलुस ने कुछ को **आत्मिक** कहा और अन्य जन को "शारीरिक" कहा (2:14) वह यहाँ पर स्पष्ट हैं परन्तु उसने (कम-से-कम इस सन्दर्भ में) यह वर्णन नहीं किया कि एक व्यक्ति किस प्रकार एक श्रेणी से दूसरी श्रेणी में पहुँच जाता है। क्या ऐसा हो सकता है? क्या किसी समूह में कोई मनुष्य जन्म से ऐसा है? क्या कोई ऐसा मनुष्य है जो कि जीवन के एक चरण में शारीरिक है और अन्य चरण में आत्मिक है? क्या लोग वास्तविक चुनाव कर पाते हैं? उनके शारीरिक अथवा आत्मिक होने के कारण क्या उनके निर्णय कुछ अर्थ रखते हैं? पौलुस ने निसन्देह यह आशा रखी कि इस पत्र का लिखा जाना उन लोगों को चुनौती देगा जिन्होंने पश्चात्ताप करने के लिए और आत्मिक बनने के लिए शारीरिक मनुष्य का मार्ग चुना। पौलुस का कुरिन्थ में सुसमाचार का प्रचार करना, उस शहर की कलीसिया के सम्पर्क में बने रहना और निरन्तर तर्क-वितर्क करते रहना और उपदेश देना - इस बात की गवाही हैं कि प्रेरित पौलुस परिवर्तन की सम्भावना में विश्वास करता था। उसने किसी प्रकार का भाग्यवादी विचार नहीं रखा। कोई भी जन अप्राप्य रुप से शारीरिक मनुष्य नहीं हैं और कोई भी जन अपरिवर्तनीय रुप से आत्मिक मनुष्य नहीं हैं। पौलुस ने अपने पाठकों से यह आशा रखी कि वे सुसमाचार की माँगों को सुनें, चुनाव करें, परिवर्तित हों और विकास पाएँ जिससे कि वे आत्मिक मनुष्य बन सकें।

जब कोई व्यक्ति अपनी इच्छा को काम में लेता है और सुसमाचार की आज्ञा का पालन करता है तब परिणाम के रुप में परमेश्वर का आत्मा उसमें निवास करने लगता है और उसे ताकत देता है। अपने साथी के रुप में पवित्र-आत्मा के साथ आत्मिक मनुष्य परमेश्वर का आदर करना और पाप के बोझ से छूट जाना तथा लँगड़ा करने और नष्ट करने वाली बातों के मध्य अन्तर करने लग जाता है।

जो व्यक्ति "आत्मिक है" वह **सब बातों में प्रशंसा करता है**। इसमें लागू किए जाने कि बात यह है कि "सब चीज़ों" की प्रशंसा करने के लिए वह अच्छे और ईश्वरीय मार्ग का चुनाव करता है। शारीरिक मनुष्य अपने चुनाव करने के बाद विश्वास, आनन्द अथवा विश्वासी की आशा को समझ नहीं सकता। परिणामस्वरुप मसीही व्यक्ति **किसी से भी प्रशंसा नहीं पाता**।

आयत 16. "जैसा लिखा है" जैसे, परिचय देने वाले पद के बिना ही (2:9 के अन्तर में), पौलुस ने यशायाह 40:13 का उद्धरण किया। 2:16 में दिए गए प्रश्न व्याख्यान विद्या विषयक हैं। **क्योंकि प्रभु का मन किसने जाना है** [और किसे इतना योग्य बनाया गया है] कि **उसे सिखाए?** स्पष्ट रुप से, किसी ने भी "प्रभु का मन" नहीं जाना है। इस प्रकार के प्रश्न किसी प्रकार के तर्क की स्वीकृति नहीं देते। प्रेरित ने इस बात को बनाए रखा कि जिस प्रकार एक आत्मिक मनुष्य परमेश्वर के मन की खोज करता है और उसका सलाहकार बनने की खोज करता है उस प्रकार एक शारीरिक मनुष्य के लिए अपनी शारीरिक बुद्धि के द्वारा आत्मिक मनुष्य के मन, हृदय और आत्मा की खोज करना असम्भव हैं। मसीही लोग "मसीह के मन" में सहभागी होते हैं जिनमें प्रभु ने यह चुनाव किया है कि वह उनमें स्वयं को प्रकट करे। शारीरिक मनुष्य परमेश्वर के मन को जानने की निकटता में आने के स्थान पर आत्मिक रुप से परख के मन को जानने की निकटता में ही आएगा।

यशायाह से लिए गए उद्धरण के अनुसार, पौलुस ने यह बल दिया, **परन्तु हम में मसीह का मन है**। यह एक साहसी कथन था। प्रथम पुरुष बहुवचन "हम" का प्रयोग करने के द्वारा प्रेरित ने यह प्रकट किया कि कुरिन्थ के लोगों के साथ एक सामान्य आत्मिक वास्तविकता में सहभागी होने के लिए स्वयं के विषय में समझ गया है। "मसीह का मन" होने का अर्थ है पाप से पश्चात्ताप करना, क्रूस के नीचे स्वयं को खड़ा करना और दिखावे से और आत्म - निर्भरता से मुँह मोड़ना। विचारों के मामलों पर कलह और पसन्द किए गए शिक्षकों पर विभाजन मसीह के मन के अनुसार नहीं हैं। अगर कुरिन्थ के लोग यह चाहते हैं कि वे अपनी समस्याओं से छूट जाएँ तो इसके लिए आरम्भिक बिन्दू यह है कि वे व्यक्तिगत घमंड को परे रख दें और अगुवाई के लिए प्रभु की ओर देखें। इस पत्र का एक बड़ा भाग प्रश्न के घेरे के अन्तर्गत विश्वास के प्रति और कलीसिया में घुसपैठ करने वाले रीति-रिवाजों के प्रति "मसीह का मन" अपनाने के लिए समर्पित है।

अनुप्रयोग

सन्देश और सन्देशवाहक

परमेश्वर से प्राप्त विशेष गुणों के साथ-साथ कुछ मसीही लोग ऐसा पाते हैं कि वे स्वयं को अच्छी प्रकार से प्रस्तुत कर पा रहे हैं; वे प्रभावी वक्ता हैं क्योंकि अधिकतम समय में सुसमाचार बोला गया सन्देश है और क्योंकि मसीह में परिपक्वता तक पहुँचने के लिए शिक्षा और धार्मिक शिक्षा मूलभूत है। इसके

कारण कलीसिया उन लोगों पर निर्भर रहती है जो कि मसीह के विषय में और स्पष्टता के साथ क्रूस के विषय में सच बोलती है और मसीही लोगों को प्रेरित कर पाती है और विश्वास को मज़बूत करती है। प्रत्येक युग की कलीसिया इसके शिक्षकों और प्रचारकों के द्वारा आशिषित की गई है। इसके विपरीत, कलीसिया सदैव उन लोगों के द्वारा श्रापित की गई जो कि स्वयं के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए, परमेश्वर के द्वारा दिए गए बोले जाने वाले गुणों का प्रयोग करने की इच्छा रखते हैं।

मसीही लोगों को चाहिए कि वे उन लोगों को निहारें जो अच्छी प्रकार से बोलते हैं। जो व्यक्ति बोलने के अपने गुणों को विकसित करता है और सच्चाई की वृद्धि के लिए उनका प्रयोग करता है उसे आदर दिया जाना चाहिए। मसीही लोगों को चाहिए कि वे परख के साथ सुनें। यह आवश्यक नहीं है कि सुगमता के साथ सुनाए जाने वाला और आनन्द देने वाला सन्देश सच्चाई को प्रस्तुत करता हो। मसीह की सेवा अच्छी प्रकार से करने के लिए जो लोग परमेश्वर का वचन सिखाते हैं उनके लिए आवश्यक है कि वे स्वयं विद्वान बनें। वे बाइबल जानते हों और दिशा-निर्देश के लिए इस पर झुकाव रखते हों। ज्ञान प्राप्त करना और शब्दों के साथ एक आचरण प्राप्त करना पर्याप्त नहीं है। एक मसीही शिक्षक को चाहिए कि वह हृदय से बोले। विश्वासयोग्यता और व्यक्तिगत समर्पण का स्थान कोई और नहीं ले सकता।

शिक्षा देने वाले इस बात की ओर इशारा करते हैं कि विद्यार्थी उन शिक्षकों के द्वारा प्रभावित और प्रेरित होते हैं जो कि अपने विषयों के प्रति उत्साही होते हैं। एक मसीही शिक्षक को सुसमाचार के प्रति न केवल उत्साही होना चाहिए परन्तु वह स्वयं इसके अनुसार जीने के लिए समर्पित हो। वह पवित्र बने। जब एक ही व्यक्ति में चरित्र और ज्ञान का झुकाव होता है और उसे बोलने के गुणों के साथ जोड़ दिया जाता है तब स्वर्ग का राज्य आशिषित हो जाता है। बाइबल के महान शिक्षक बोलने मात्र के गुण पर ही निर्भर नहीं रहे। उन्होंने अपने सुनने वालों को इस बात के लिए प्रेरित किया कि जो कुछ उन्होंने कहा है उसके द्वारा ही नहीं जैसे वे हैं उसके द्वारा भी उनके श्रोता प्रेरित हों। सच बोलने वाले लोगों के बीच और बोलने के गुणों के साथ श्रोताओं को चकित करने और उनका मनोरंजन करने वाले लोगों में चुनाव किया जाना हो तब सच का चुनाव किए जाने के द्वारा कलीसिया आशिषित होती है।

पौलुस के आलोचकों ने स्पष्ट रुप से कुतर्क करने के स्तर में उसमें गलती पाई। अन्य जन ने पौलुस के बोलने के गुणों में और दार्शिक सूक्ष्मता में आवश्यकता से अधिक उसे ऊँचा उठाया (2 कुरिं. 10:10; 11:6)। पौलुस ने संसार पर प्रभाव डाला क्योंकि उसका हृदय आग से भरा हुआ था। वह मसीह और क्रूस में पूर्ण रुप से सोख लिया गया था। उसने स्वयं को समर्पित किया जिससे कि असीमित रुप से ऐसा व्यक्ति बन जाए जैसा बनने के लिए उसने अन्य लोगों से भी आग्रह किया। वर्तमान की कलीसिया उस समय आशिषित हो जाएगी जब इसके शिक्षक और प्रचारक सच्चाई जान लेंगे, अपने जीवन के लिए

उसे गले लगा लेंगे और इसके पश्चात अपने साथीगण से सही प्रकार से सच बोलेंगे।

एक आत्मिक जन होने का अर्थ (2:15)

कुछ ऐसे शब्द हैं जो कि मसीही भाषा में "आत्मिक" शब्द की तुलना में सामान्य रुप से अधिक सुनने को मिलते हैं। पौलुस ने 1 कुरिंथियों 2:15 और गलातियों 6:1 में उन मसीही लोगों की प्रशंसा की जो कि आत्मिक हैं। मसीही लोग जब आत्मिक होते हैं तो यह एक गुणवान लक्ष्य है परन्तु इस प्रकार से इस शब्द का आसानी से शोषण होता है। ऐसा आवश्यक नहीं है कि वे सब लोग जो आत्मिक दिखाई देते हैं, धर्मी हों।

"आत्मिकता" नामक संज्ञा शब्द सम्भव है कि उपयोगी हो परन्तु बाइबल में यह पाया नहीं गया। बाइबल के लेखक आत्मिकता की निराकार विशेषता के अन्तर्गत धर्मी जीवन-यापन के विषय में नहीं बोलते। यहाँ तक कि लोगों का वर्णन करने के लिए "आत्मिक" नामक विशेषण शब्द का प्रयोग भी बहुत कम ही प्रयोग में लिया गया है। सम्भव है कि एक वरदान (रोम.1:11) अथवा व्यवस्था (रोम.7:14) आत्मिक हो। सच्चाई के समान ही कुछ आराधना और आशीषें आत्मिक हैं (रोम.12:1; 15:27)। बाइबल कभी भी किसी व्यक्ति को अलग करके ऐसा नहीं कहती, "वह आत्मिक है," हालांकि यह कभी-कभी सामूहिक रुप से मसीही लोग जैसे शब्दों का प्रयोग करती है।

किसी व्यक्ति के बोलने के आधार मात्र पर ही पौलुस ने कभी भी आत्मिक होने का निर्णय नहीं दिया। आत्मिक होने के लिए यह नहीं देखा जाता कि कोई व्यक्ति अपनी बोली में "यीशु" शब्द का प्रयोग कितनी बार करता है अथवा वह कितनी बार ऐसा बोलता है "परमेश्वर की स्तुति हो!" एक आत्मिक पुरुष अथवा स्त्री विश्वासियों के समुदाय में आशा और आनन्द पाते हैं। एक सामूहिक गुण आत्मिक लोगों में फैल जाता है। एक आत्मिक व्यक्ति विश्वासयोग्यता से भरा हुआ होता है। वह प्रार्थना के क्षणों में अथवा किसी मित्र के लिए कोई छोटा भला काम करने में भी आनन्द पाता है। आत्मिक जन के जीवन में, मसीह में विश्वास करना कोई अलग से जुड़ी हुई वस्तु नहीं है। प्रार्थना करना साँस लेने के समान ही है। एक आत्मिक व्यक्ति मसीह के विषय में उसी प्रकार से बोलता है जैसे कि एक प्रशंसक अपने पसंदीदा खेल के दल के विषय में बोलता है। आत्मिक होने का अर्थ है कि मसीह को अन्दर लेना, उसके वचन पर झुकाव रखना, उसके लोगों से प्रेम करना और उसके लोगों के साथ उसकी आराधना करना।

अन्दर से आने वाला ज्ञान (2:15)

शारीरिक मनुष्य और आत्मिक मनुष्य के बीच जो अन्तर पौलुस ने दिए वे यह सुझाते हैं कि कुछ आत्मिक सच्चाइयाँ मसीही विश्वास के अन्दर से ही समझी जा सकती हैं। एक व्यक्ति जो कि बाहर खड़ा है, परमेश्वर के प्रति समर्पित नहीं है

अथवा उसके विरोध में है, कभी भी वह नहीं जान पाता और सम्भव है कि जान भी नहीं सकता जैसा कि मसीह में उद्धार पाने वाला व्यक्ति जानता है।

क्या यह सच है कि कुछ मसीही सच्चाइयाँ उनमें भाग लेने के द्वारा ही जानी जा सकती हैं? उदाहरण के लिए, मान लिजिए कि एक व्यक्ति अपना जीवन इस बात पर अध्ययन करने और खोज करने में बिता दे कि मछली किस प्रकार अपने गलफ़ड़ से ऑक्सिजन लेती है, और उस प्रक्रिया पर और गलफ़ड़ बनाने वाले ऊतक पर विश्व-प्रसिद्ध दक्ष व्यक्ति बन जाता है। अगर वह व्यक्ति किसी प्रकार से मछली बनने की और फिर वापस मानव रुप पाने की स्वीकृति पा ले तो यह कैसा रहेगा? किसी भी जन के लिए यह ऐसा होगा कि इस प्रकार के वैज्ञानिक ने मछली बनने के अनुभव से चीज़ों को सीखा है जिसे दशकों का सैद्धांतिक अध्ययन कभी भी उपलब्ध नहीं करवा सकता।

मान लिजिए कि बाइबल की नैतिकता अथवा इसके ऐतिहासिक विवरण के विषय में सैद्धांतिक बातचीत - गहरी, गहन और उपयोगी हो फिर भी उसे मसीह में विश्वास के साथ लिपटे रहने के साथ अदला - बदली नहीं किया जा सकता। ऐसी समस्याएँ जिन पर जय पायी न जा सके उनके सम्मुख आन्तरिक शांति, आशा, विश्वासियों की संगति और अच्छे का चुनाव करने की सन्तुष्टि धारण करना व्यक्तिगत विषय है और इन्हें शब्दों में प्रस्तुत करना कठिन है। मसीही लोग अन्यजाति लोगों के बीच अपने विश्वास के प्रति आकर्षण का विवरण देने में कठिनाई महसूस करते हैं क्योंकि कुछ सच्चाइयाँ विश्वास के घेरे में अनुभव के द्वारा ही समझी जा सकती हैं।

समाप्ति नोट्स

[1]हंस-रुडी वेबर, *द क्रोस: ट्रेडिशन ऐंड इन्टरप्रिटेशन*, ट्रांस. ऐल्के जेसेट (लंडन: SPCK, 1979; रिप्रिन्ट, ग्रान्ड रेपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. अर्डमेन्स पब्लिशिंग कं., 1979), 73. [2]रिचर्ड ई. ओस्टर, जुनियर, *1 कोरिंथियन्स*, द कोलेज प्रेस NIV कमेन्ट्री (जोपलीन, मो.: कोलेज प्रेस पब्लिशिंग कं., 1995), 81. [3]सिराक 15:14-17; NAB. (यह पाठ, जो कि "द विज्डम ऑफ़ बेन सिराक" अथवा "इक्लिसीएस्टस" भी कहलाता है, अपोक्रिफ़ा का भाग है.) [4]लिओन मोरिस, *द फ़र्स्ट एपिस्ल ऑफ़ पौल टू द कोरिंथियन्स*, रिवा. ऐड., द टिंडल न्यु टेस्टेमेन्ट कमेन्ट्रीज़ (ग्रान्ड रेपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. अर्डमेन्स पब्लिशिंग कं., 1985), 56. [5]पौल एस. मिनिअर, "क्राइस्ट ऐंड द कोंग्रिगेशन: 1 कोरिंथियन्स 5-6," *रिव्यु ऐंड एक्सपोज़िटर* 80 (समर 1983): 349. [6]वॉल्टर बौर, *अ ग्रीक-इंग्लिश लेक्सिकन ऑफ़ द नयु टेस्टामेन्ट ऐंड अदर अर्ली क्रिश्चियन लिटलेचर*, 3र्ड ऐड., रिवा. ऐंड ऐड. फ़्रेडरिक विलियम डेंकर (शिकागो: युनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस, 2000), 953. [7]ESV में "इन्टरप्रेटिंग स्पिरिचुअल ट्रुथ्स टू दोज़ हू आर स्पिरिचुअल" है। [8]रॉबर्ट एच. स्टेन, *अ बेसिक गाइड टू इन्टरप्रेटिंग द बाइबल: प्लेइंग बाइ द रुल्स* (ग्रान्ड रेपिड्स, मिशिगन: बेकर बुक्स, 1994), 66-67.